लेखिका तथा प्रकाशिका :—

स्वामिनी मीरां यति

आर्या मीरां यति, आर्य वानप्रस्थआश्रम

ज्वालापुर (जि० सहारनपुर)

दो हजार प्रतियां]

[जनवरी १९८२

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी मुद्रणालय, हरिद्वार ।

भूमिका

प्रत्येक व्यक्ति मानव का जन्म लेकर कुछ न कुछ धार्मिक कार्य करता रहे तो उसका दुनियां में आना सार्थक होता है और यह सब कुछ व्यक्ति के ऊपर निर्भर करता है, चाहे वह अपने समय को स्वाध्याय, चिन्तन- मनन में लगाये, चाहे वह निरर्थक बातों में या इधर-उधर घूमकर व्यतीत कर दे, क्यों-कि मनुष्य स्वतन्त्र है।

परन्तु जो बुद्धिमान हैं, वह समय की कदर करते हैं और उसमें वह कुछ न कुछ सुकृत्य करते रहते हैं। मेरी विचार-धारा तो आरम्भकाल से यही रही है कि समय को व्यर्थ नहीं खोना चाहिए। इसलिए प्रभु की प्रेरणा पाकर जब भी समय मिलता है और स्वास्थ्य साथ देता है तो लेखनी और कागज लेकर बैठ जाती हूं। ईश्वरीय प्रेरणा से जो भी हृदय तथा मस्तिष्क में आता है—लिखती रहती हूं।

यह 'ईशमाला' पुस्तक मैंने लगभग १० दिन के भीतर ही लिखी है। इसमें मैंने ईश्वर का असली स्वरूप क्या है और उसका क्या नाम है, धाम कहां है, फिर क्या काम करता है, वेद और शास्त्रों के आधार पर लिखा है। महर्षि जी ने आर्य समाज के दूसरे नियम में प्रभु के जिस स्वरूप का वर्णन किया है उसका भी विस्तृत वर्णन लिखा है। मेरी तो यह भावना है कि लोग ईश्वर के सत्यस्वरूप को समझ कर उस की पूजा नहीं बल्कि उपासना करके अपना जीवन सफल करें।

इससे पूर्व मेरी एक दर्जन के लगभग पुस्तकें छप चुकी हैं। अभी कुछ मास पूर्व ही 'नकली भगवान' पुस्तक मैंने जनता की सेवा में अर्पित की थी इसीलिए अब उचित समझा कि असली भगवान क्या है इसका दिग्दर्शन जनता को होना चाहिए।

मैंने अपनी अल्प बुद्धि से इसको लिखा है। आशा है स्वाध्यायशील व्यक्ति इसका मूल्यांकन करेंगे, जिससे मेरा उत्साह-वर्धन होगा। इसी उत्साह को लेकर मैं आगे भी लेखन-कार्य करती रहूँगी। प्रभुदेव मुझे शक्ति और सुमति प्रदान करें ताकि जीवनपर्यन्त इसी प्रकार सेवाकार्य करते-करते इस यात्रा को सफल करूं।

—स्वामी मीरां यति

—:•:—

आचार्य धर्मपाल आर्य
इ. वैदिक पुस्तकालय मुरादाबाद
संपर्क 9869128779.

ईशमाला

प्रभु के विषय में हमें जानकारी ठीक-ठीक और उचित होनी चाहिये। जब तक हम उसे भली-भांति न जान लें तब तक उससे हमारा स्नेह नहीं हो सकता। यूं ही ऊपर से कहते जाएं और हृदय से स्वीकार न करें या वाणी से बोलते जाएं कि प्रभु है—प्रभु है, लेकिन अन्तःकरण पर इस बात का प्रभाव ही न हो कि प्रभु क्या है—कहां रहते हैं—क्या काम करते हैं--किसप्रकार सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय इत्यादि करते हैं। इन सब बातों की जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि पूरी-पूरी जानकारी नहीं तो हमारी वही अवस्था होगी जो उस बालक की हुई। जो अपने पिता के साथ मेला देखने गया। अत्यधिक भीड़ होने से बालक का हाथ छूट गया अब पिता चिन्तित होकर चारों ओर ढूंढ़ रहा है। उसी मेले में उसका मित्र मिला। उसने पूछा क्या बात है, लड़का गुम हो गया है—मिलता नही ? उसने कहा मैं भी ढूंढता हूं वह भी लग गया, चारों ओर चक्कर लगा रहा है, आकर कहा मुझे तो मिलता नहीं ? उसने कहा यह देखो मिल गया है। मित्र कहता, यह था—इसे तो मैंने कई दफा वहां देखा परन्तु मुझे परिचय नहीं था। मैं तो सोचता था बच्चा आपका जैसा सुन्दर होगा। यदि आप परिचय दे देते तो मैं तुरन्त इसको ले आता।

बस यही बात उस ईश्वर के विषय में है। जब तक उसके स्वरूप को हम नहीं जा न लेंगे तब तक इस दुनियां के मेले में

भटकते रहेंगे। कभी मूर्त्ति में, कभी पत्थर के भीतर तो कभी जाकर मन्दिर में तलाश की। वहां पर न मिले तो हरिद्वार दौड़े। क्या बात है, लाखों लोग यहां क्यों आये हैं, अजी आपको नही मिले, यहां एक नया नगर बना है वहां साक्षात् भगवान् हैं, बहुत करनी वाले हैं; दर्शन कर लो, बेड़ा पार हो जायेगा। नरकों से बच जाओगे, स्वर्ग का पासपोर्ट दे देते हैं। यह सब क्या है, इसीलिये तो कहा है अज्ञानता मानव की शत्रु है, जब मिट जाती है प्रभु के दर्शन हृदय में ही हो जाते हैं। यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के मन्त्र ८ में प्रभु की महत्ता का वर्णन मिलता है।

"स पर्यगा०" 'स' कहा है, जिसका अर्थ 'वह' है, हम चिन्तन करें 'यह' क्यों नहीं कहा 'वह' ही क्यों कहा, इस कारण कि अज्ञानी हूं—मैं उसे जानता नहीं हूं—जब जान जाऊंगा तभी तो कह सकूंगा 'यह' है। जिस प्रकार लोक में बालक जानना चाहता है कि मेरा पिता कौन है तो उसको पिता का पता माता ही बता सकती है, बिना माता के वह जान ही नहीं सकता। इसी प्रकार बिना श्रुति माता के परम-पिता परमात्मा का कोई ज्ञान नहीं करवा सकता। वेद स्वयं ही कह रहा है—'स्तुतामया वरदा वेदमाता'।

यह ही एक ऐसी माता है जो बता सकती है कि प्रभु कहां है। अगर हम कहें कि बिना वेदमाता के जान लें तो नहीं जान सकते। चाहे कितना ही यह लोग कहते रहें सब अपनी-अपनी अटकलें लगाकर बता रहे हैं, एक तो यह कह रहे हैं विशेष स्थान में रहता है, पूछो विशेष स्थान कहां है तो

कोई उत्तर नही ? दूसरे कह रहे हैं कि चौथे आसमान में रहते हैं। अब मुसलमानों ने भी सोचा कि यदि हमने तीसरे आसमान पर कह दिया तो हम तो पीछे रह गये इसलिए क्यों न इससे बढ़कर छलांग लगायें। उन्होंने कहा, देखो हमारा खुदा सबसे बड़ा इस कारण है कि वह सबसे ऊंचे सातवें आसमान पर रह रहा है।

परन्तु सीखा तो दयानन्द से ही था क्योंकि उन्होंने ही तो बताया:—

ओं भूः। ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम्। तै. प्र. १ अनु १७॥

वे कहते थे परमेश्वर सत्यस्वरूप है, उसे सत्यवादी ही जान सकता है दूसरा नहीं ? अब ये दयानन्द की बात तो सुन चुके थे परन्तु भली-भांति समझ नहीं पाये। उन्होंने तो कहा था वह सातों ही लोकों में रहते हैं, इन्होंने कह दिया सातवें आसमान में बैठा है।

बस इसी कारण से कह रहा है—वह प्रभु, यह नहीं दावे से कहता क्योंकि जब जानता ही नहीं तो कहे भी कैसे ? इसकी अवस्था उस बालक की तरह है जो अपनी आंखों पर पट्टी बांधकर आंखमिचौली खेलता हुआ साथी बालकों को ढूंढता फिरता है, दोनों हाथों को इधर-उधर मारता है परन्तु वह हाथ में नहीं आते। जब ही पट्टी खोली मित्र समीप ही मिल गये। हम सब भी जब अज्ञानता की पट्टी को खोल देंगे तो तुरन्त बोल उठेंगे—'यह' है।

लेकिन यह अज्ञानता दूर हो तभी बात है। अज्ञान किस को कहते हैं—अन्धकार को,अविद्या को। मनुष्य अल्पज्ञ होने के कारण बस अन्धकार को दूर करने में उतनी क्षमता नहीं रखता। इसीकारण उस पारब्रह्म को समीप होने पर भी प्राप्त नहीं कर सकता। बचपन में ही एक कहानी दूसरी या तीसरी कक्षा में पढ़ते हुए अपनी कोर्स की पुस्तक में पढ़ी थी वह इस प्रकार थी—

एक बुढ़िया माई की सुई गुम हो गई। वह बाहर सड़क पर जाकर ढूंढने लगी। एक नवयुवक उधर से जा रहा था। उसने पूछा-माँ जी! क्या ढूंढ रहे हो, उसने कहा-बेटा,मेरी सुई तो घर में गुम हो गई थी परन्तु घर में दीपक न होने के कारण मैं यहां पर ढूंढ रही हूं। उस नवयुवक ने कहा— माँ जी, यहां पर आपको सुई नहीं मिल सकती, आप घर जाकर दीपक जलाकर ढूँढें वहीं पर मिलेगी।

बस, यही हालत इस अल्पज्ञ प्राणी की है। परमात्मा तो इसके भीतर है परन्तु अविद्या का अन्धेरा होने से यह उस प्रभु को बाहर ढूंढ रहा है। आज तो हमारे देश में लाखों लोग ऐसे मिलेंगे जो उसको स्थान-स्थान पर ढूंढ रहे हैं, और अपनी मनमानी कल्पना से उसके नाम रख लिए हैं। कोई कहता है यह इस नाम के भगवान हैं, कोई कहता है हमारे भगवान जी का यह नाम है। फिर इसी प्रकार उनके रहने के स्थान भी अलग-अलग धाम बनाकर रक्खे हुये हैं। इनसे पूछो क्या काम करते हैं तो तुरन्त बता देंगे, जी, आपको नहीं ज्ञात

इनकी करनी। जरा भी किसी के ऊपर दृष्टि डालें तो तुरन्त उसका दु:ख दूर हो जाता है, कोई निर्धन हो उसे धन की प्राप्ति हो जाती है, किसी के पुत्र न हो इनके आशीर्वाद से मिल जाता है। यह सब क्या है, मूल में देखा जाये तो अविद्या जनित बातें हैं इनमें सत्य जरा भी नहीं। केवल धोखा है फरेब है, दुनियां को बहकाने के लिए यह सब कुछ माया जाल रचा जा रहा है।

यदि ये लोग इन सब मायावी बातों को छोड़कर सत्य-स्वरूप परमेश्वर की छान-बीन करें तो जान सकते हैं। लेकिन ये लोग परिश्रम नहीं करना चाहते। वेद, शास्त्रों, उपनिषदों इत्यादि का स्वाध्याय करें तो प्रभु की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। वेदों में अनेक मन्त्र ऐसे हैं जो प्रभु के विषय में बताते। इसी प्रकार गीता तथा उपनिषदों को पढ़ कर देख लीजिए :—

एकोवशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं रूपं बहुधा यः करोति।

एक प्रभु सबको बस में रखने वाला, सबका अन्तर्यामी जो एक रूप वाली प्रकृति को बहुधा बहुत प्रकार का करता है। जो धीर पुरुष उस जीवात्मा में स्थित परमात्मा को देखते हैं, उनको चिरकाल तक रहने वाला सुख प्राप्त होता है (इतरेषाम्) अन्यों को नहीं।

आइये हम सबसे प्रथम प्रभु के नाम पर विचार करें वेद के अनुसार तो प्रभु का मुख्य नाम ओ३म् है ।

॥ ओ३म् ॥

ओं क्रतो स्मर ओं खं ब्रह्म । यजु. ४० अ० ।
ओमित्येतदक्षरमिदँ सर्वंतस्यो व्याख्यानम् ॥ माण्डू.
ओमित्येक्षर मुद्गीथ मुपासीत ॥ छान्दोग्य

पाठकवृन्द, प्रभु के ओं नाम के विषय में इतने प्रमाण ही बहुत हैं । स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में प्रभु के एक सौ नाम लिखकर हम सब लोगों को यही बताया है कि यह सब उसके विशेषण हैं असली नाम ओं ही है ।

इस लिए आजकल जो लोग इस पचड़े में पड़े हुए हैं कि हमारा भगवान बढ़िया और उसका नाम बढ़िया है । वे आपस में झगड़ा कर-कर के परम पिता परमात्मा के नाम से उप-हास कर रहे है । किसी भी मन्दिर में आप चले जाइये, उसने जो भगवान बनाकर बैठाया हुआ है उसको तो बढ़िया बतायेगा और दूसरे को घटिया । एक बार बृन्दाबन जाने का अवसर प्राप्त हुआ । मैंने स्वयं अपनी आंखों से लड़ाई करते उसे देखा तो मैं बहुत देर तक वहां खड़ी चिन्तन करती रही कि यह क्या हो रहा है ।

शैब से कहिये 'विष्णु' वह कहता नहीं । इसी तरह विष्णु को मानने वाले से कहो 'शिव' वह कहता नहीं । अब दोनों का धातु अर्थ देखिये, शिव धातु कल्याण के

अर्थ में हैं,विष्णु शब्द 'विष्लृ व्याप्तौ' धातु से बनता है जिसका अर्थ है वे प्रभु सारे संसार में व्याप रहे हैं।

'शिव' तो सारे विश्व का कल्याण करता है और 'विष्णु' सर्वव्यापक होने से संसार का पालन-पोषण कर रहे हैं। परन्तु ये दम्भी और नकली भक्त दोनों की भक्ति करने के बजाय लड़ाई कर रहे हैं।

मेरा ऐसे भक्तों से बहुत विनम्रतापूर्वक निवेदन है कि वे इन उलझनों में न उलझें और प्रभु का जो 'ओं नाम' है उसका ही स्मरण भजन करें। इसी ओं नाम को जितने भी मत मतान्तर के लोग हैं सब मानते हैं। आप भी इसी 'ओं' पर आस्था करें तो आपका कल्याण हो सकेगा।

ईश्वर के मुख्य नाम ओं का मैंने यह थोड़ासा वर्णन किया है। अब उसके जो दूसरे नाम विशेषण से हैं उनका वर्णन कर रहो हूँ।

ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हुए महर्षि दयानन्द जी महाराज ने आर्य समाज के द्वितीय नियम में लिखा है—

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान,न्यायकारी,दयालु,अजन्मा,अनन्त,निर्विकार,अनादि,अनुपम,सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है। ऐसा ही वेदशास्त्रों में भी ईश्वर का स्वरूप बतलाया है। यथा—

ईशावास्यमिदं सर्व०, यजु.

ईश्वर सारे संसार में व्याप रहे हैं।

य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदे ।

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ।

ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्य दर्शनात्—न्याय

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति" कहकर परमात्मा के ईश्वर नाम की घोषणा की गई ।

सत् चित्

प्रभु का नाम सत् चित् है, इस में वेद जहाँ प्रमाण है वहाँ पर ब्राह्मण ग्रन्थ और दर्शनों तथा उपनिषद् में भी उसे सत् चित् कहा गया है ।

गन्धर्वो धाम विभृतं गुहासत्—यजु० ३२-९

प्रजापतिर्वै चित् ।। शतपथ

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम् । कठ २-५-१३

आनन्द

आनन्द नाम प्रभु का है क्योंकि और किसी के पास यह नहीं हैं। केवल परमात्मा के पास ही है। हम दुनिया में आनन्द लेना चाहते हैं। यह आनन्द तीन प्रकार का है विषयानन्द, वासनानन्द और ब्रह्मानन्द। वास्तव में देखा जाये तो यह ब्रह्मानन्द ही सच्चा और सुखकारी है। इसलिए प्रभु प्राप्ति का आनन्द अन्नादि भोगों से होने वाले आनन्दों से बढ़कर है।

नित्य के आनन्द की समता अनित्य पदार्थों के आनन्द (सुख) से की भी कैसे जा सकती है। इस आनन्द का वर्णन वेद, दर्शन, उपनिषद इस प्रकार से वर्णन कर रहे हैं :—

कस्त्वा सत्यो मदानां। ऋग् ४-३१-२

को हि प्रजापतिः ॥ शत० ६।२।२।५

आनन्दो ब्रह्मेति व्याजनात्। तै० उ० ३-६

अनन्दमयोऽभ्यासात् ॥ वेदान्त १-१-१२ इत्यादि।

निराकार

उस परमात्मा का कोई आकार अथवा शकल नहीं है। वेद में स्पष्ट वर्णन है 'न तस्य प्रतिमाऽस्ति' उस परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं ? जब मूर्ति नहीं तो आकार भी नहीं हो सकता। इसी कारण महर्षिजी ने वेद के आधार पर उस प्रभु को निराकार लिखा है। इसी प्रकार से उपनिषदों में भी अरूपं, अदेश्यं कहकर उसके निराकार होने का कथन किया गया है:—

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरोऽजः।
अप्राणो ह्यमना शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः ॥ मु.२-१-२॥

वह परमात्मा दिव्य अमूर्त्त (निराकार) सर्वत्र पूर्ण, बाहर और भीतर सर्वत्र विराजमान, अजन्मा, मन तथा प्राण

रहित, निर्मल तथा प्रकृति से भी सूक्ष्म । ऐसे ही वेदादि सत्यशास्त्रों में सर्वत्र उसे निराकार ही बताया गया है ।

सर्वशक्तिमान्

वह प्रभु शक्तिमान् है । उस जैसी शक्ति किसी अन्य में नहीं हो सकती । उसकी शक्ति अपार है । इसी कारण से वेद में उसको सहस्रशीर्षा इत्यादि बताया है ।। यजु० ३१ ।।

उसकी असंख्य बांहे हैं, असंख्य आंखे, असंख्य ही हाथ हैं । यह एक अलंकारिक भाषा में कहा गया है । परन्तु उसका न पैर, न सिर, न आंखे परन्तु उसकी शक्ति अपार है । वेद में उसको अनन्त शक्तियों का स्वामी कहा गया है । वह सर्व-शक्तिमान् है ब्राह्मण ग्रन्थों में भी कहा है कि—

इन्द्रो विश्वजिदिन्द्रो हीदं सर्वं विश्वमजयत् ।।कौ० २४-१

परमेश्वर्य का भण्डार प्रभु विश्वजित् सब पर शासन करता है और उसने इस विश्व को विजय किया हुआ है । उपनिषद में उसकी सर्वशक्तिमत्ता का वर्णन निम्न शब्दों में किया गया :—

एतास्याक्षरस्य प्रशासने गार्गि सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः । एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने द्यावापृथिव्यौ विधृतौ तिष्ठतः ।।

बृहद्० ३-८-९

हे गार्गि ! इस अविनाशी परमात्मा के शासन में ही सूर्य

चन्द्रादि लोक तथा द्युलोक और भूमि स्थित होकर ठहरे हुये हैं। यदि वह न हो तो ये लोक नष्ट भ्रष्ट हो जावें।

न्यायकारी

उस प्रभु को न्यायकारी इसलिये कहते हैं क्योंकि वह सबके कर्मों का यथावत् फल देते हैं। वह किसी को कम या अधिक नहीं देते और फिर वह किसी के साथ बेइन्साफी नहीं करते क्योंकि न तो उनका कोई अपना और न पराया है, न उन्होंने किसीसे रिश्वत लेकर काम करना है। वह तो ऐसे न्यायाधीश हैं जो जैसा करे वैसा फल दे देते हैं।

यथाकारी यथाचारी साधुकारी साधु भवति।
पापकारी पापं भवति पुण्यकारी पुण्यं भवति॥

वेद में उसके न्यायकारी होने का स्पष्ट वर्णन मिलता है। विशां राजानामद्भुतमध्यक्षं धर्म्मणामिमम्। अग्निमीले स उ श्रवत्॥ ऋ० ८-४३-२४॥

(विशां) प्रजाओं के (अद्भुतं राजानम्) अद्भुत राजा (धर्म्मणां अध्यक्षम्) धर्मकार्यों = न्यायनियमों के योग्य अध्यक्ष अर्थात् कर्म फलदाता (इमं अग्निम्) इस तेजस्वी देव की (ईडे) स्तुति करता हूं (सः) वह (उ) अवश्य (श्रवत्) सुनता है। इस मंत्र में परमात्मा को धर्म कार्यों, न्यायनियमों का अध्यक्ष कहा गया है। जो जैसा करता है उसे वैसा ही फल प्रदान

करता है। वहां वेद प्रभु के न्यायकारी होने में प्रमाण है; वहां पर दर्शनकार ने भी उस प्रभु को न्यायकारिता को बहुत स्पष्ट किया है।

'नेश्वराधिष्ठिते फल सम्पत्तिः कर्मणा तत्सिद्धेः'। सांख्य। जो जैसा कर्म करता है तदनुसार ही परमात्मा फल देता है, स्वेच्छा से नहीं, क्योंकि वह न्यायकारी है। अन्यत् भी 'फलमत उपपत्तेः' ।। वे॰ ३-२-३८ ।।

उस परमात्मा से कर्मानुसार फल प्राप्त होने से वह न्यायकारी है।

दयालु

वह परम परमेश्वर बहुत दयालु है। वह अनवरत गति से सदा दया करते हैं। उनकी दया की वर्षा प्रत्येक समय प्रत्येक क्षण होती है। हम चाहे उसको जाने, मानें या न माने, इस में उनको कोई अन्तर नहीं पड़ता। वह तो अपना कार्य निरन्तर अबाध गति से करते रहते हैं। वेद उनकी दयालुताका बहुत सुन्दर शब्दों में स्पष्टीकरण कर रहा है :—

यो मृडयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः।
अनुव्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।।

ऋग्॰ ...

पूज्य परमात्मा के निकट (वयं अनागाः स्याम) हम अपराधो न होवें = सदा निरपराध होकर रहें(अदितेः)उस अखण्ड सर्व-व्यापी देव के (व्रतानि अनु) सत्यादि विविध व्रतों के अनुकूल (ऋधन्तः) आचरण करें।

हे दयापारायण धर्मात्मा लोगों ! (यूयं) आप सब (नः) हमको (स्वस्तिभिः) कल्याणों से (सदा)हमेशा (पात) रक्षित करो।

मृडा सुक्षत्र मृडया। ऋ० २-२८-६

अनेक अपराध करने पर भी प्रभु हमको अन्न, जल, वायु प्रकाशादि देते हैं, अतः यह सब उनके दयालु होने का ही कारण है। दर्शन में भी कहा है—

स्वोपकारादधिष्ठानं लोकवत्। सां० ५-३ ॥

वह लौकिक राजा की भांति सबका अधिष्ठाता है तथा दयालु होने से सदा सबका उपकार करता है। जैसे पिता अपनी सन्तान का कल्याण चाहता है वैसे ही परम पिता परमात्मा भी चाहता है, क्योंकि वह भी तो सबका पिता है। इस लिए पुत्र चाहे नालायक हों या चोर डाकू जुहारी भी हों वह किसी से द्वेष न करके समान रूप से सबको वायु जल तथा अन्य वस्तुयें देते रहते हैं, बांटते ही रहते हैं, यही उनका सब से दयालु होने का महान् गुण है।

अजन्मा

प्रभु को अजन्मा कहने से यह तात्पर्य स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे कभी जन्म नहीं लेते। यह भी उनकी अन्यत्र लोगों से विशेषता है। यदि वह भी जन्म लेने लग जायें तो फिर भगवान ही क्या हुये। शरीर धारण तो मनुष्यों से लेकर अन्यत्र कीट पंतगे इत्यादि को प्रभु ही करवाते हैं अन्यथा कर्मों के अनुसार ऊंच-नीच योनि में भेज देते हैं। असल में वे ही जगत् के सम्राट हैं, राजा है ब्राह्माण्डपति हैं। उनको अजन्मा कहना और मानना चाहिये। जैसा कि शास्त्र प्रमाण दे रहे हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में भी प्रभु के अजन्मा होने का वर्णन मिलता है —

ब्रह्म वा अजः—शत. ६-४-१५ ॥

अर्थात् वह परमात्मा निश्चय ही अजन्मा है। उपनिषद् भी कहती है—

'अजं ध्रुव' (निश्चल) सारे तत्वों से पृथक् परमात्मदेव को जानकर ब्रह्मतत्वदर्शी सब बन्धनों से छूट जाता है।

उत्पत्त्यसम्भवात्—वे० २-२-३९ ॥

ईश्वर के जन्म का असम्भव होने से उसका कोई कर्त्ता नहीं। ऐसे ही सर्वत्र उसे अजन्मा कहा गया है।

अनन्त

यह 'अनन्त' शब्द प्रभु की महिमा का अतीव सुन्दर रूप से वर्णन कर रहा है। अनन्त का सीधा और साधारण अर्थ

यह है कि प्रभु का अन्त नहीं है। हम यह नहीं कह सकते कि वह ईश्वर कब शुरु हुये थे और कब समाप्त होंगे। फिर यह भी नहीं कह सकते कि वह इतने लम्बे हैं, इतने चौड़े अथवा मोटे हैं। बस, उनका आकार न होने से, कोई रंग रूप न होने के कारण वेद उसे अनन्त कह रहे हैं।

अनन्तं विततं पुरुत्रानन्तमन्त वच्चा समन्ते।
ते नाकपालश्चरति विचिन्वन् विद्वान् भूत मुत भव्यमस्य॥

(अनन्तम्) अनन्त=अन्तरहित ब्रह्म (पुरुत्रता) सर्वत्र विततम्) व्यापक है। (अनन्तम्) यह अनन्त ब्रह्म (च) और (अन्तवत्) अन्त वाले—सान्त जीव प्रकृति (समन्ते) मिले हुये हैं। (ते) इन दोनों को (विचिन्वन्) पृथक्-पृथक् समझने वाला (उत) और (अस्य) इसके (भूत भव्यम्) भूत और भविष्यत् को (विद्वान्) जानने वाला (नाक-पालः) सुख का पालक होकर (चरति) विचरता है।

परमात्मा अनन्त है तथा जीव प्रकृति—जीवों को देह से संम्पर्क होने से तथा प्रकृति का विकृति रूप होने से सान्त है। ऐसा ही दर्शन में भी कहा है कि—

अतोऽनन्तेन तथा हि लिङ्गम्। वे० ३–२–२६॥

जीव अनन्त परमात्मा के साथ मिलकर अपहत पाप्मादि गुणों को धारण करता है।

निर्विकार

परम पिता परमेश्वर को निर्विकार कहा गया है अर्थात् उसमें कोई विकार नहीं है। अथर्ववेद १०-८-४४। के मन्त्र में जहां उसको 'अकामो; धीरो कहा गया हैं वहां पर (कुतश्चन) कहीं से भी (ऊनः) न्यून कम (न) नहीं है अर्थात् उस में कोई भी विकार नहीं है सर्वथा निर्विकार है। लेशमात्र भी तो उस में विकार नहीं आ सकता। मनुष्य चाहे कितना भी बड़ा हो, फिर चाहे चारों वेदों का भी क्यों न विद्वान् हो, उसमें अवश्य कोई न कोई न्यूनता रहती ही है। केवल एक परमात्मा ही है इस सारे संसार में, जिसमें तीनों कालों में कभी विकार नहीं आता। वह हमेशा एकरस रहते हैं।

अनादि

ईश्वर के लिए 'अनादि' विशेषण इस दूसरे नियम के अन्दर जो लिखा है उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि प्रभु का न तो आदि है और न ही अन्त है। जिस वस्तु का आदि होता है, उसका अन्त भी होता है। जब वह आदि नहीं तो अन्त भी नहीं कहा जा सकता। तभी तो योग दर्शन में उसे 'कालेनानवच्छेदात्'' कहकर उसकी अनादिता का प्रतिपादन किया गया है।

अनुपम

यह 'अनुपम' शब्द भी बहुत प्यारा है- जिसका तात्पर्य है उस परमेश्वर के बराबर किसी की उपमा नहीं दी जा सकती।

क्यों, जब उस जैसा कोई है ही नहीं तो उसका मुकाबला कैसे किया जा सकता है। हम मनुष्यों के लिए तो उपमा दे सकते हैं कि इस बच्चे की शकल बिल्कुल पिता के ऊपर है, उस जैसा स्वभाव है, उस की तरह ही बोलता है लेकिन प्रभु के लिए कैसे कह सकते हैं। जब उस जैसा प्रभु कोई दूसरा हो तो कहें। वे तो एक ही है, निश्चय से एक है। उसकी उपमा को और भी स्पष्ट करने के लिए वेद मंत्र लिख रही हूं :—

न कि इन्द्रत्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्।
नक्येवं यथा त्वम् ॥ सा० पू० ३-१-१० ॥

हे अज्ञाननाशक विज्ञानैश्वर्यसम्पन्न प्रभो! न कोई तुझ से श्रेष्ठ है। न ज्येष्ठ है। और न ही कोई ऐसा है जैसा कि तू है।

उपनिषद् में कहा है :—

श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥ श्वे० ६-७ ॥

न कोई परमात्मा के समान है और न अधिक। उसकी उत्कृष्ट शक्ति अनेक प्रकार की सुनी जाती है। ज्ञान, बल व क्रिया उस में स्वाभाविक हैं।

सर्वाधार

इस 'सर्वाधार' शब्द से तुरन्त जानकारी मिलती है कि जगदीश्वर पिता सब के आधार हैं। कोई भी जगत् का ऐसा

प्राणी नहीं है,जिसके वे आधार न हों। क्या धनी,क्या निर्धन, क्या ऊंच,क्या नीच,तो चाहे कोई पढ़ा लिखा विद्वान् हो, चाहे अनपढ़, हो मूर्ख भी क्यों न हो, वे दयालु पिता सबके ही आधार हैं।

हम लोग नित्य प्रति प्रातः और सायंकाल यज्ञ करते हुए जब ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के मन्त्रों का पाठ करते हैं तो दूसरे ही मन्त्र के एक भाग में यह कहते हैं—

"स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमाम्"

अर्थात् द्यावा पृथिवी का उन्हें धारक बताया गया है। फिर चौथे मन्त्र में कहा—

'य ईश अस्य द्विपश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम'

देवों का स्वामी, लोगों का आश्रय, (द्विपद्) दो पाये तथा चतुष्पद् (चौपायों) पर भी शासनकर्ता अथवा उनके शरीरों का रचियता, द्यावा भूमि का आधर (आयतन) आकाशादिकों का धारक बतला कर उसका वर्णन किया है कि वही परमात्मा सब का आधार है। अतः उसी की उपासना करो।

सर्वेश्वर

प्रभु को सर्वेश्वर कहा है किस कारण क्योंकि वह ही सबके ईश्वर हैं उनके सिवाय हमारा और कोई सर्वेश्वर पिता नहीं है जैसा कि वेद माता कह रही है—

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् । त्वम् राजा जनानाम् ॥ ऋ. ८–६४–३ ॥

हे ऐश्वर्य सम्पन्न जगदीश्वर ! तू उत्पन्न पदार्थों का ईश्वर है और तू ही अनुत्पन्न = नित्य जीव तथा प्रकृति का तथा आगे उत्पन्न होने वाले पदार्थों का भी ईश्वर है। तू ही लोकों का राजा है। इसी प्रकार दर्शन में भी कहा है—

पत्यादि शब्देभ्यः ॥ वे. १–३–४२ ॥

उपर्युक्त प्रमाणों में सर्वस्येशानः, सर्वस्याधिपतिः; सर्वेषां भूतानां राजा, ईश्वराणाँ परमं महेश्वरम्, पतिपतीनां परमं, पत्यादि वाक्यों से उसका सर्वेश्वर रूप से ग्रहण किया है। और करें भी क्यों न ? 'ज़ब स्व' है तो स्वामी होना हो चाहिये।

सर्वव्यापक

वह जगन्नियन्ता जगदीश्वर सारे संसार में व्याप रहे है। कोई भी ऐसा स्थान नहीं है जहां पर परमेश्वर न रहता हो। प्रत्येक शरीरधारी मनुष्य के अन्दर वह व्याप रहे हैं चाहे कोई पशु हो अथवा कीट-पतंग इत्यादि, सब में उन का निवास है। उनके सर्वव्यापक होने में किसी को भी सन्देह नहीं होना चाहिए। वह तो जगत के कण-कण में, अणु में, परमाणु में, सब जगह ओत-प्रोत हैं। तभी तो कहा गया

सूक्ष्म से सूक्ष्म वह है स्थूल इतना कि,
जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाया ।

बस, अन्तर केवल इतना है कि मूर्ख व्यक्ति उसको न जानकर यह कहता है कि प्रभु नहीं है और ज्ञानी अपने ज्ञान चक्षुओं से उसके दर्शन प्रत्येक स्थान पर करता है उसे तो ऐसा कोई स्थान ही नहीं दिखाई देता, जहां पर उसे दृष्टिगोचर न होता हो । इसलिए सब लोग विवेकशील बनकर वेद के अनुसार उसको सर्वत्र व्यापक देखें ।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य वाह्यतः ।। यजु. ।।

महर्षि जी इसका अर्थ आर्याभिविनय में इस प्रकार से करते हैं— तद् (ब्रह्म) एजति वह परमात्मा सब जगत को यथायोग्य अपनी-अपनी चाल पर चला रहा है, सो अविद्वान् लोग ईश्वर में भी आरोप करते हैं कि वह भी चलता होगा परन्तु वह सब में पूर्ण है, कभी चलायमान नहीं होता । अतएव तन्नैजति (यह प्रमाण है) स्वतः वह परमात्मा कभी नहीं चलता, एक रस निश्चल होकर भग है । विद्वान् लोग इसी रीति से ब्रह्म को जानते हैं । "तद्दूरे" अधर्मात्मा, बिचार-शून्य, ईश्वरभक्ति रहित इत्यादि दोषयुक्त मनुष्यों से वह ईश्वर बहुत दूर है अर्थात् वे कोटि-२ वर्ष तक उसको नहीं प्राप्त होते । इससे वे जन्म, मरणादि दुःखसागर में इधर-उधर घूमते-फिरते हैं । "तद्वन्ति" सत्यवादी, सत्यकारी,

सत्यमानी, विद्वान् विचारशील पुरुषों के "अन्तिके" अत्यन्त निकट है। किंच, वह सबके आत्माओं के बीच में अन्तर्यामी व्यापक होके सर्वत्र पूर्ण भर रहा है। सो आत्मा का भी आत्मा है, क्योंकि परमेश्वर सब जगत के भीतर और बाहर तथा मध्य अर्थात् एक तिलमात्र भी उसके बिना खाली नहीं है। वह अखण्डैक रस सब में व्याप रहा है, उसी को जानने से ही सुख और मुक्ति होती है अन्यथा नहीं।

सर्वान्तर्यामी

इसका तात्पर्य यह है कि प्रभु सबके अन्तर अर्थात् भीतर की सब कुछ जानता है। मनुष्य एक दूसरे को नहीं जान सकता कि उसके दिल में क्या बात है। लेकिन प्रभु सब कुछ जानते हैं। हम एक दूसरे से बात छिपा सकते हैं परन्तु उस प्रभु से नहीं छिपा सकते, क्योंकि वेद के अनुसार परम-पिता परमात्मा सबके अन्तर्यामी हैं।

यत् रोदसी अन्तरा यत्परस्तात् तत् सर्वं राजा वरुणो विचक्षरे।

जो द्युलोक और पृथिवी में है अथवा इनसे भी परे हैं, उस सबको राजा वरुण—शासक परमात्मा अन्तर्यामी होने से जानता है।

प्रभु की सर्वव्यापकता को गुरु नानकदेव जी ने भी अपनी वाणी में लिखा है—

घट--घट की वह जानत।
भले--बुरे की पीर पछानत ॥

और एक पंजाबी के कवि ने लिखा है—

लोकाँ तो लकोना वह तू ओस तो लोकोयेगा की।
हर था जो छुपेया होआ ओस तो छुपावेगा की ।।

इन सब बातों मे पाठकवृन्द समझ गये होंगे कि प्रभु सर्वान्तिर्यामी हैं।

अजर

ईश्वर को 'अजर' क्यों कहा है। इसका अर्थ है, जरारहित- जरा बुढ़ापे को कहते हैं। उसमें वृद्धावस्था का होना कैसे हो सकता है, क्योंकि जिसका जन्म हो उसी को बाल्यकाल, यौवन और वृद्धावस्था आती है। प्रभु का तो जन्म ही नहीं होता, फिर जरावस्था के आने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। वेदमाता प्रभु के अजर होने का स्थान-स्थान पर निर्देश कर रही है, उन सबको न देकर केवल एक ही स्थान का प्रमाण दे रही हूं--

तं एव धीरं अजरं युवानं आत्मानम । अ. १०-८-४४ ॥

उसी धीर, अमर, सदा जवान, सर्वव्यापक परमात्मा को जानने वाला मृत्यु, जन्म, मरण से नहीं डरता है।

अमर

इस 'अमर' नाम का जो विशेषरण प्रभु को लगाया गया है, यह भी उस जगदीश्वर पिता के अमरतत्व का प्रतिपादन कर रहा है। जिसका तात्पर्य है अ=मर अर्थात् न मरने वाला। वह हमेशा-हमेशा से है और आगे भी हमेशा इसी तरह रहेगा। वेद कहता है—"अमृत: स्वयम्भू" और ब्राह्मण-ग्रन्थों में भी कहा है—

प्रजापतिर्वा अमृत: ॥ शत. ६-३-१-१० ॥

वह प्रजापति, प्रजा का मालिक और पालक अमर रहता है। इसी बात को उपनिषद् भी प्रतिपादित कर रही है—

आनन्दरूपममृतं यद्विभाति। मु. २-२-७ ॥

एष महानज आत्माऽजरो अमरोऽमृतोऽभयोब्रह्म ॥

॥ बृहदा. ४-४ ॥

उक्त प्रमाणों में भी उसे अमृत, अमर आदि नामों से सम्बोधित किया गया है। यह युक्तिसंगत भी है। यदि परमात्मा को अमर न मानें तो वह संसार की व्यवस्था को भी नियमानुसार नहीं चला सकता और न जीवों को उनके पिछले कर्मों के अनुसार फल ही प्रदान कर सकता है। इसी-लिए वेदादि सद्ग्रन्थों में उसे अमर कहा है।

अभय

'अभय' का सीधा और सरल अर्थ है कि उसको किसी का भय नहीं, यह बात जरा चिन्तन करने की है। भय तो उसको होता है जो कोई छोटा हो या शरीरधारी हो। वह अपने से बड़े बलवान् से डरता है। यहां परमदेव परमेश्वर न तो शरीरधारी हैं, न फिर उनसे बड़ा कोई और है। इस कारण उन्हें 'अभय' कहना बिल्कुल युक्तिसंगत बात है।

उपनिषद् भी उसे अभय कहकर पुकारती है। देखिए-

स वा एस महानज आत्मा अजरो अमरो अमृतो अभयो ब्रह्म। अभयं वै ब्रह्म। अभयहँ्ह वै ब्रह्म भवति य एवं वेद॥

॥ बृहदा. ४-४-२५ ॥

यह महान् आत्मा=परमात्मा अजन्मा, अजर, अमर, अमृत अभय, तथा सर्व संसार में बृहद्-ब्रह्म है। ब्रह्म अभय है। जो यह जानता है, वह ब्रह्मवत् अभय (उसके गुणों को धारण कर) हो जाता है।

इसी प्रकार अनेक स्थानों पर उसे अभय कहकर पुकारा गया है। जिसके लिए वेद में "जेतारमपराजितम्" सब पर विजय-लाभ करने वाला तथा किसी से पराजित न होने वाला कहा है। वह 'अभय' क्यों न हो। सर्वोपरि विराजमान को किसका भय हो सकता है।

नित्य

वे प्रभु नित्य हैं अर्थात् सदा सर्वदा ही रहते हैं। वेद इस बात की साक्षी दे रहा है—

भाग्योऽभवदेको अन्नमदद् बहु।
यो देवमुत्तरावन्तमुपासातै सनातनम् ॥अ. १०-८-२२॥

जो अनेक उत्तम गुण युक्त, सनातन-नित्य, देव की उपासना करता है, वह भाग्यशील है और परमात्मा की दया से अनेक योग्य वस्तुएं प्राप्त करता है।

उपनिषद् भी यही कहती है कि वह—

नित्यो नित्यानाम् ॥ **कठ ५-१** ॥

नित्यों में नित्य है।

पवित्र

यह जो 'पवित्र' विशेषण प्रभु को दिया गया है; इसका यह तात्पर्य है कि वह कभी भी अपवित्र नहीं होते। मनुष्य तथा इतर प्राणी तो अपवित्र हो जाते हैं। जब कभी भी हम भूल करते हैं, पाप इत्यादि कर लेते हैं। और किसी पराई नारी को पुरुष, इसी प्रकार पराये पुरुष को नारी यदि कुदृष्टि से देखती है तो वह पवित्र नहीं कहला सकती।

परन्तु प्रभु में इनमें से कोई भी दोष नहीं आ सकता।

वह तो हमेशा-हमेशा पवित्र हैं। इस पवित्रता का प्रमाण वेद दे रहा है, प्रभु के विषय में—

इन्द्रशुद्ध नमागहि शुद्धाः शुद्धाभि रूतिभिः।
शुद्धो रयिं नो निधारय शुद्धो ममद्धि सौम्यः॥

॥ ऋ. ८-९५-८ ॥

हे परमात्मन्! पवित्र रक्षाओं द्वारा शोधक तथा स्वयं पवित्र आप हमें प्राप्त होवें। आप शुद्ध धन देते हैं और स्वयं पवित्र तथा सौम्य होकर हम सब को सदा आनन्दित करते हैं।

उपनिषद् भी उसे पवित्र बताने में किसी से पीछे नहीं है। वरन् अनेक विशेषणों सहित उसके पवित्र होने की घोषणा करती है यथा—

हिरण्मये परेकोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम्।
तच्छुभंज्योतिषाँ ज्योतिस्तद् यदात्मविदो विदुः॥

मु. २-२-९

सृष्टि--कर्त्ता

इस नाम से प्रभु की महत्ता का वर्णन मिलता है। उसके अन्यत्र कोई शक्ति नहीं इस संसार में, जो सृष्टि की रचना कर सके। वही अनेक प्रकार के मनुष्य ही नही पशु, पक्षी तथा असंख्य प्राणियों की रचना करते हैं। वेद उसकी

महत्ता का वर्णन कर रहा है।

य इमे द्यावा पृथिवो जनित्री रूपैरपिंशद्भुवनानि विश्वा।
तमद्यहोतरिषितो यजीयान्देवं त्वष्टारमिह्यक्षि विद्वान् ॥
॥ऋ. १०-११०-९॥

य इमे द्यावा पृथिवी जनित्री

जो वह इस द्युलोक तथा भूमि लोक को उत्पन्न करता है और(विश्वाभुवनानिरूपैरपिंशत्)सम्पूर्ण लोकों को तत्तद्रूप से मुक्त करता है। हे (होतः) होता! (अद्य) आज तू इस रहस्य को जानता हुआ (इषितः) विज्ञानयुक्त होकर सदिच्छा से प्रेरित होकर (यजीमान्) अत्यन्त यजनशील होता हुआ (तंत्वष्टाहं देवम्) उस सृष्टि कर्त्ता देव को (इह) इस स्थान में, इसी जन्म में (आयति) भली प्रकार पूजा कर।

कितनी स्पष्टता से मन्त्र ने उसके सृष्टि कर्त्तव्य का वर्णन किया है। मानों इसका केवल यही ध्येय है। अब ब्राह्मण तथा उपनिषद् के प्रमाण भी देख लीजिये।

प्रजापतिः प्रजाः सृष्ट्वाविश्वकर्माअभवत्। ऐ. ४-२२॥
जन्माद्यस्य यतः। वे. १-१-२॥

उसी को उपासना करने योग्य है—

यह जो महर्षि ने लिखा है, 'उसकी ही उपासना करनी चाहिए' प्रश्न पैदा होता है किसकी? तो इस दूसरे नियम में

यह बताया गया कि जिस परमात्मा के अन्दर इतने गुण हैं, जिसमें यह विशेषण हो, जो कभी जन्म न लेता हो और मरता भी न हो। जो हमेशा अजर, अमर, अभय रहता है, उसकी ही उपासना करें। दूसरे की नहीं करनी चाहिए।

इतना लिखने पर प्रिय पाठकवृन्द समझ गये होंगे कि ईश्वर का नाम क्या है?

❀ ❀ ❀

धाम

अब प्रभुके(धामके)विषय में स्पष्टकर रही हूं। क्योंकि उसके रहने के स्थान के विषय में लोगों में बहुत भ्रम है। जैसे नाम का भ्रम वैसे ही धाम का भ्रम है। उस सर्वदेशी को एक देशी बना कर उसको एक स्थान पर बिठा दिया गया है। शिव जी कैलाश पर्वत पर और विष्णु जी क्षीर सागर में लेटे हुए हैं। इसी प्रकार जितने भी और भगवान हैं, सब अलग-अलग स्थानों पर धाम बनाकर मनुष्यों की तरह रह रहे हैं। आज-कल कुछ परिवर्तन आने से नये फैशन के भगवान जो बढ़िया-बढ़िया बङ्गलों में रह रहे हैं।

हमारी समझ के बाहर की बात है। वेद कितना स्पष्ट कह रहा है :—

स परिअगात। यजु. ४० अ., मन्त्र ८

वह सारे ही संसार में व्याप रहे हैं। कैसे सारे ब्रह्माण्ड में रम रहे हैं जैसे मिशरी की डली को पानी में घोल दिया जाय फिर जहां से भी भरकर देखेंगे, पानी मीठा ही मीठा जबान को लगेगा। इसी प्रकार हम चारों ओर दृष्टिपात करके देखें तो सर्वत्र उसी की महिमा का वर्णन मिलेगा। जरा ज्ञान चक्षुओं को खोलकर तो देखो, तभी पता चलेगा।

आज लोग भूलते जा रहे हैं। तभी तो प्रति वर्ष हजारों नहीं, लाखों की संख्या में लोग श्रावणी में गंगा जल लेने के लिये हरिद्वार आते हैं और २५० मील या इस से भी अधिक

पैदल चलकर जायेंगे। इन में छोटी आयु के नवयुवक, महिला तथा बड़े लोग होते हैं। ये अपने-अपने कन्धों पर बेंहगी रख-कर उन में दोनों ओर छोटी २ टोकरी लगाकर उसके भीतर कांच की बोतल में थोड़ा सा गंगाजल लेते हैं। पूछो, कहां जा रहे हो तो उत्तर देते हैं—भगवान पुरा देव को जल चढ़ाने जा रहे हैं।

प्रभु कहता है मुझे जल चढ़ाकर अहसान कर रहा है लेकिन मैं वर्षा करके कितना जल बरसा देता हूँ, उसका कोई नाम नहीं लेता। वेद भ्रम मिटा देता है 'स परिअगात' है, वह सर्वत्र चारों ओर है। अज्ञानी कहता 'नहीं है, यदि हो तो दिखाई न दे। विद्वान् कहता है 'तू' इन चर्म चक्षुओं से देखना चाहता है वह इन इन्द्रियों का विषय नहीं है, वह तो आत्मा से दीखता है'।

हमारे पौराणिक भाई यह दलील देते हैं कि जब सर्वत्र है तो मूर्त्ति में क्यों नहीं ? हम उनसे कहते हैं यह बात तो आपकी ठीक है कि प्रभु मूर्त्ति में भी है। लेकिन तू तो वहां पर नहीं है जहां पर आत्मा होगा वहीं पर दिखाई देगा। तू उलटा चलता है, बाहर की ओर मुख किये हुये है और अन्दर ध्यान लगाना नहीं चाहता। साधना करता नहीं, एकान्त बैठता नहीं, फिर शिकायत करता है कि दिखाई नहीं देता।

ज्यों नैनन में पूतली त्योंमालिक घट मांही।
मूर्ख लोग न जानते बाहिर ढूंढन जांही॥

आज तक उसको किसी ने आँखों से देखा नहीं कानों से सुना नहीं। कठोपनिषद् कितना स्पष्ट कह रहा है :—

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति, नो मनो, न विद्मो, न विजानीमो, यथैतदनु शिष्यादन्यदेव, तद्वि दितादथो अविदिता दधि ।

उपनिषद् का ऋषि प्रभु के विषय में कितना स्पष्ट कर रहा है कि ऐ दुनिया के लोगों ! तुम उसका धाम बता रहे हो। वह तो जगत् के कण-कण में समाया हुआ है। कहते हैं कि शिव जी ने काम को जीत लिया तो तीसरा नेत्र खुल गया। इन लोगों का कहना है कि यह नेत्र माथे में खुला था। हमारा कहना है कि जिस मानव का ज्ञान का नेत्र खुल जाता है तो उसे सारे ब्रह्माण्ड में दिखाई देता।

हम सब आर्य लोग प्रात:काल और सायंकाल ब्रह्मयज्ञ करते हैं। संध्या के मनसा परिक्रमा मन्त्रों में उस प्रभु को चारों ओर देखते हैं। पूर्व पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चारों दिशाओं में उसका प्रचार है। जैसे समुद्र में मछली के चारों ओर जल ही जल है, इसी प्रकार मानव ! तू भी अपने दायें-बाये ऊपर-नीचे, उसी का अनुभव कर। इतना ही नहीं, सारे विश्व में उसका धाम मान। जहां पर भी तू भी दृष्टि डाले, वहीं पर उसको देख उस कर्त्ता की जितनी भी कृतियां हैं, वह अन्दर ही अन्दर तो बनाता है। बच्चों को कैसे अन्दर से मोटे कर रहा है। फिर पशु-पक्षियों को कैसे बढ़ा रहा है। हम तो बाहर से वस्तु को बनाते हैं। इस लिए वेद की बात की ओर ध्यान दो। वेद कह रहा है—'स परिअज्ञात'—वह भीतर भी है और बाहर भी है। कैसे जाने ? उसकी कृति

को देखकर जानो स्पष्ट होता है। उसने कैसे २ सुन्दर पुष्प बनाये हैं। एक व्यक्ति माली को पूछने लगा 'यह फूल कैसे बनाया है? माली ने उत्तर दिया—'मैं तो केवल पौधा लगाना और जल से सींचना जानता हूं, बाकी सब काम प्रभु के हैं'' कैसे २ उस में रंग भर रहा है, कैसी सुगन्धि दे रखी है, कैसी कोमलता है। 'फिर देखो, किस प्रकार से प्रत्येक वृक्ष के पत्तों को अलग २ तरह के बनाया है। किसी मनुष्य में सामर्थ्य नहीं, जो बना सकें।

इतना ही नहीं, जब हम अपने शरीर की रचना को देखते हैं तो उस परमात्मा के प्रति अपने आप ही श्रद्धा पैदा होती है। देखो, प्रभु ने एक-एक इन्द्रिय को कैसे बनाया है। फिर उन सब में अलग-अलग कार्य करने की शक्ति भी प्रदान की है। नाक सूंघ रही है। क्या बात है? जैसी खाल हाथों में है, कानों में है, वैसी ही नाक पर है। फिर इस में ऐसा कौन सा मसाला लगाया है जो सूंघ कर गन्ध और दुर्गन्ध को बता देती है। कान में कौन सी मशीनरी फिट की हुई है, जो सुनने का कार्य करती है। मुख के अन्दर देखो तो मस्तिष्क चकरा जाता है। कहां से पत्थर लेकर दान्त बनाये। फिर बीच में जो जीह्वा (जीवा) है उस में क्या अद्‌भुत् शक्ति है जो गर्म, सर्द, खट्टा, मीठा पहिचानने की सामर्थ्य रखती है। तू कहता है कि भगवान नहीं है तो फिर यह तेरा शरीर किसने बनाया है। अज्ञानी उत्तर देता है कि वाई एक्सीडेन्टल (By exidental) ही बन गया।

हम उससे कहते हैं—अलग २ रंग पड़े हैं। कभी अपने आप भी चित्र बनते देखें हैं। ओह दुनियां के मतवाले लोगों! जरा विचार तो करो, कोई बनाने वाला है। प्रिंटिंग प्रेस में अलग २ लोहे के बने हुये उल्टे अक्षर पड़े हैं, कागज और स्याही अलग पड़ी है, बताओ कभी देखा है कि स्वयं पुस्तक छप गई हो। जब तक उन सबको कोई जोड़ने वाला न हो तब तक पुस्तक तैयार नहीं हो सकती।

इसी प्रकार तू कहता रह कि सृष्टि को बनाने वाला कोई नहीं है, तो कौन मानने को तैयार है। यदि तू कहे मेरा पिता कोई नहीं, परन्तु तू बिना पिता के नहीं बन सकता था।

एक नास्तिक आर्य विद्वान् से कहता। "मैं ठीक कहता हूं कि ईश्वर नहीं है" विद्वान् ने उत्तर दिया यह जो 'है' शब्द पीछे आया है, यह स्पष्ट कह रहा है 'ईश्वर हैं'।

उस व्यक्ति ने हाथ में घड़ी (बान्धी) लगाई हुई थी। उससे पूछा यह कैसे चलती है, कहता आटोमेटिक। विद्वान् कहता नहीं यह जो तेरी कलाई में अन्दर बारीक-बारीक नसें चलती हैं, उससे चल रही है। जब तू उतार देता है। इतना कहकर वह कुछ विचार करने लग गया। थोड़ी देर के पश्चात् कहता—अच्छा यदि ईश्वर है तो फिर दिखाई क्यों नहीं देता। आर्य विद्वान् बहुत बुद्धिमान् था। उसने तुरन्त उत्तर दिया—ये क्या बात है? दिखाई तो कई वस्तुयें नहीं,

देतीं ? अच्छा सोचो, तुम्हारी आंख नहीं हैं। कहता कि 'हैं'। तो फिर दिखाई न देने पर भी आप स्वीकार करते हैं। कि 'है'। पीडा है परन्तु दिखाई नहीं देती। भूख लगती है किन्तु दिखाई नहीं देती। पेट दर्द हो रहा है लेकिन डाक्टर को दर्द दिखा नही सकते। इसी प्रकार रात्रिको स्वप्न आता है, यदि उसको जागने पर अपने मित्रों को तथा सम्बन्धियों को बताते हैं। यदि वे लोग कहें तो क्या हम उन्हें दिखा सकते हैं ? नहीं, वह प्रत्यक्ष प्रमाण को न मानकर उस समय हमारी बात पर विश्वास कर लेते हैं।

तू कहता रह, प्रभु नही है पूछो, आज परलोक जा रहे हो। कौन ले जा रहा है, क्योंकि तू जाना नहीं चाहता, परिवार तुझे भेजना नहीं चाहता। वे तुझे अपने पास रखने के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे है। जरा सा रोगी हुआ डाक्टर बुलाया। रोग बढ़ा वे डर रहे हैं। फिर भी मृत्यु ले गई। तू देखता ही रह गया। यह कौन है ? जो इतना जबर दस्त है। जो तेरी बात को मानता नहीं है। तेरे रिश्तेदारों को बार २ की हुई प्रार्थना को स्वीकार नहीं करता। अवश्य है कोई। 'वह है'—उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करने वाला, जगत् सम्राट् जगदीश्वर।

विदेश में एक वैज्ञानिक ने अपने कमरे में लिखकर लगाया हुआ था। "God no where"—अर्थात् "भगवान् नहीं हैं। "एक दिन ऐसा आया। अंग ढीले पढ़ने लगे। शरीर शिथिल हो गया। बुद्धि बदल गई। ध्यान आया तो सोचा कि कहीं

सारी आयु भूल तो नहीं की? पोत्रा आया, उसे कहता-सामने लिखा हुआ पढ़ो, क्या है, वह कहता—

"God No Hear"

भगवान सब जगह हैं। दादा कहता मन नहीं मानता। पोत्रा कहता इस मन को समझा दो कि बिना कर्त्ता के कोई कार्य नहीं हुआ करता। यह वृक्ष क्या तूने बनाये हैं ? दादा कहता कि यह तो बीज से बने हैं। तो पोत्रा कहता बीज क्या स्वयं बन गया था? उसे भी बनाने वाला कोई है।

इस लिए उस परमेश्वर को मानो, जो सर्व व्यापक और सर्वान्तिर्यामी है।

इसके आगे वेद कहता है वह 'अकाय' है अर्थात् शरीर धारण नहीं करता जब शरीर धारी नहीं तो उसको धाम की आवश्यता ही क्या रह जाती है। श्रुति कहती है—जिसका शरीर है, वह भौतिक बन्धन में आता है। चाहे वह छोटा हो चाहे बड़ा हो। मृत्यु हँसती है, मेरा खाद्य बन गया। श्री राम, विष्णु के अवतार, श्रीकृष्ण जी भी अवतार सबके शरीर चले गये। उनका यश का शरीर रह गया। परन्तु पांच तत्व के शरीर को तो मृत्यु खा गई। बस यही पक्की धारणा बना ले। वह 'अकाय' है। जो सकाय व्यक्ति होता है, वह अमर नहीं हो सकता। यदि शरीर धारण करेगा तो बन्ध आयेगा। उसे भूख लगी, अब प्यास लगी, गर्मी लग रही है तो अब सर्दी से ठिठुर रहा है, नींद भी आयेगी तो सोने के

लिए धाम चाहिये । परन्तु श्रुति कहती है उसका अलग कोई धाम नहीं हैं सारा ब्रह्माण्ड ही उसका घर है ।

बहुत लोग यही कहते हैं कि जब शरीर नहीं तो कैसे प्रभु के ऊपर श्रद्धा करें ? बिना शरीर के ध्यान भी कैसे करें फिर प्यार भी कैसे करें ? आर्य विद्वान् ने कहा अरे भाईयों ! प्यार कभी शरीर से नहीं होता । ध्यान भी शरीर से नहीं होता । यदि शरीर से ध्यान होता तो श्री कृष्ण जी जिनको आप भगवान मानते हैं, सामने खड़े थे और अर्जुन कह रहा है—हे भगवान् ! मन बड़ा चंचल है, लगता नहीं है ।

इस लिए प्यार और ध्यान शरीर से नहीं, गुणों से होता है । हमें क्या मालूम कि राम सुन्दर थे या रावण परन्तु हम राम से प्यार करते है । क्या राम ने हमारा कोई काम किया था, नहीं ? रावण ने हमारा कोई नुकसान किया था, नहीं । केवल राम के गुणों के कारण ही हम प्यार करते हैं । इतना कुछ चिन्तन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जब प्रभु का शरीर नहीं तो फिर उसके रहने को धाम की कल्पना करना केवल अज्ञानता के और कुछ नहीं है फिर भी ये लोग ईश्वर के अवतार लेने में बहुत आस्था रखते है । इस कारण अवतार के विषय में जानकारी देना मैं अत्यन्त आवश्यक समझती हूं; जिससे यह गलत धारणा भी दूर हो ।

कुछ लोगों का कहना है कि ईश्वर निराकार तो है ही किन्तु कभी २ जब संसार में पाप बढ़ जाते हैं । तब वह

साकार रूप में भी प्रकट हो जाता है और अवतार धारण करके पृथ्वी का भार उतारता है। अपने इस कथन का आधार वे गीता के निम्न श्लोकों को मानते हैं :—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
परित्रानाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे॥
भग. गीता. अ० ४ श्लोक ७-८

श्री कृष्ण जो कहते हैं–जब २ धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब मैं शरीर धारण करता हूं। साधुओं की रक्षा के लिए तथा दुष्टों के विनाश के लिये और धर्म स्थापन के लिए मैं अपने को प्रत्येक युग में प्रकट करता हूँ, जन्म लेता हूँ।

ये लोग २४ अवतार बतलाते हैं। यथार्थता यह है कि अवतारबाद की कल्पना जैनियों के २४ तीर्थङ्करों के विरुद्ध की गई है। परन्तु बाद में अज्ञान के कारण उसी में उलझकर रह गये। इन २४ अवतारों में भी निम्न १० को मुख्य माना जाता है :—

१ मत्स्य २ कच्छप ३ वराह ४ नृसिंग ५ बामन ६ परशुराम ७ रामचन्द्र ८ श्रीकृष्ण ९ बुद्ध १० कल्कि जो भविष्यत् में होने वाला है।

इन अवतारों में भी भगवान् क्रम से विकास करते गये।

प्रथम 'मत्स्य' अवतार में भगवान जल से बाहर नहीं जा सकते थे। द्वितीय 'कच्छप' का अवतार लेकर परमात्मा जल तथा स्थल दोनों में भ्रमण कर सकते थे। दौड़ नहीं सकते थे, तीसरे 'वराह' अवतार ने इस कमी को पूर्ण किया और वह दौड़ भी सकते थे किन्तु थे तो आखिर पशु ही। इसके पश्चात् चौथा अवतार 'नृसिंह' का हुआ और वह जहां कुछ भाग पशु का लिये हुये थे। वहां उन में कुछ अवयव मनुष्य के भी थे। पांचवे अवतार 'वामन' में विकास यह हुआ कि वह केवल मनुष्य का ही हुआ किन्तु था कम ऊंचा। छठे अवतार 'परशुराम' में यह कमी भी पूर्ण हुई और वह पूरे मनुष्य हुये, किन्तु थे क्रोधी। सप्तम अवतार 'श्री राम' पूर्ण हुआ अष्टम लीलावतार 'श्री कृष्ण जी' का हुआ। नवम 'बुद्ध' का यह पूर्ण शान्त हुए। दशम अवतार 'कल्कि' आगे होगा, जो पूर्ण ही होगा। यह है इन अवतार वादियों की कल्पना। इनमें से पांच अवतार सतयुग में हुए, दो त्रेता में, एक द्वापर में तथा एक कलियुग में।

जब हम इनकी इस कल्पना को परीक्षा की कसौटी पर परखते हैं तो यह सर्वथा असत्य प्रतीत होती है इनका कहना है कि सज्जनों की रक्षा, दुष्टों के विनाश तथा धर्म की स्थापना के लिए भगवान अवतार लेते हैं परन्तु पुराणों को पढ़ने पर यह सिद्ध होता है कि इस कार्य के लिए अवतार नहीं हुए। किन्तु कोई प्रेम में फंसकर कोई कुकर्म करके अवतार लेने पर बाध्य हुए। यदि उक्त तीन कार्यों के लिये ही भगवान ने अवतार लिया होता तो प्रथम अवतार मत्स्य

केवल जल में ही रह सकता था। यदि कोई जल से बाहर पाप करे तो भगवान जी का प्राणान्त ही हो जाये जब उनकी स्वयं की यह अवस्था है तो फिर किसका उद्धार करें जल से बाहर निकलते ही तो अपने उद्धार का भय है। दूसरे कश्यप जी महाराज उन्हें प्रत्येक समय भय बना रहता था कि कहीं कुत्ता या शृंगाल न मिल जाये। नहीं तो ओं तत् सत् होने का भय है और यदि पाप कर्त्ता दौड़ पड़े तो ईश्वर जी अपने कार्य में सफल ही न हों सकें अतः पूर्वोक्त तीनों कार्यों को करने में वे भी बुरी तरह असफल रहे। तीसरे अवतार "वराह देव जी" थे। वे भी वृक्ष पर चढ़े पापी को मारने में समर्थ न हो सकते थे। अतः उनका अवतार भी अपने कार्य को नहीं कर सकता था। चौथे अवतार थे "नृसिंह जी" उनका रूप ऐसा था कि उनसे कोई अपना उद्धार कराने के लिए समुक्षत ही न होता होगा। ऐसे भयंकर रूप को तो देखकर ही भय लगे। फिर सिंह का क्या भरोसा, खा ही जाये। और भगवान ने अवतार किस लिए लिया। पिता पुत्र का झगड़ा था। पिता पुत्र को पढ़ने के लिए कहता था किन्तु पुत्र पढ़ता न था। इसी कारण भगवान् ने अवतार लिया और दुष्ट पिता को मार दिया। आजकल भी पिता पुत्र के झगड़े चलते ही रहते हैं। न जाने अब परमात्मा उसे निपटाने क्यों नहीं आते। पहले तो ऐसे छोटे-२ काम के लिए भी भगवान अवतार लेते थे। न जाने क्यों भगवान अब अवतार नहीं लेते क्योंकि इस समय तो पाप पहले से भी अधिक होता है इस बात को वे भी मानते हैं। पांचवे अवतार

थे "वामन जी"। इनसे जब बलि ने इनका परिचय पूछा तो अपने को ब्रह्मचारी बताया। जो सर्वथा असत्य था और देखिये, एक ओर तो ईश्वर वेदों में यज्ञ का विधान करते है और दूसरी ओर बलि का यज्ञ विध्वंस करने के लिए वामन रूप धारते हैं। बलि यज्ञ करके इन्द्र पद को प्राप्त करना चाहता था तो क्या बुरा करता था ?

यह है इनकी अवतार लेने की बेतुकी बातें, जब प्रभु ने शरीर धारण किया तो अब रहने को घर चाहिए। अब उस की कल्पना देखो। कितनी बढ़िया है। उसके लिए उन्होंने मन्दिर बनाने शुरु कर दिए। हमें घर चाहिए, प्रभु को भी घर चाहिए। यह कैसे हो सकता है कि हम तो सुरम्य भवनों में सुखपूर्वक निवास करें और भगवान रहे अन्तरिक्ष की छाया मे। यह सोचकर बहुमूल्य विशाल मन्दिर बनवाये और उसमें रक्खा अपने भगवान को। अपना धन, भगवान के काम न आ सका तो है किस काम का ? जिसमें समस्त ब्रह्माण्ड निवास करता है, उसके निवास के लिए भी मन्दिर बना डाला। मन में तो यह विचारा था कि अब हम भगवान की ओर से निश्चिन्त हो गये और जो कुछ हमें उसके लिए करना था कर चुके। परन्तु कुछ काल के पश्चात् ध्यान आया कि भगवान के पास वस्त्र नहीं, आभूषण नहीं हैं। यदि वस्त्राभूषण पहनें, तो कितने सुन्दर लगते। हम वस्त्र पहनें और भगवान नग्न रहें। राम-राम, कितना पाप हमको लगेगा।

बस, इस विचार के आते ही उन्होंने अपने हाथों से निर्मित पत्थर के भगवान् को सुन्दर-सुन्दर परिधान धारण कराने आरम्भ कर दिये। संसार का तन ढाँपने वाले की चिन्ता हमें करनी पड़ने लगी। वस्त्रों से सुसज्जित आभूषणों से शोभित हुये भगवान् को देखकर फूले न समाये।

किन्तु चिन्ता ने कलेवर बढ़ाया। यदि भगवान् के वस्त्र तथा आभूषण कोई उतार ले तो? उसका भी प्रबन्ध हुआ एक व्यक्ति को पुजारी बनाकर उसकी सेवा में रक्खा। पहले पुजारियों को निकृष्ट कोटि का मानव समझा जाता था। परन्तु अब तो यह परमात्मा का रक्षक बनाया गया। अतः उसका मान भी होने लगा। विश्व की शोभा के स्वामी को जिसे कि वेद ने **"श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ"** कहकर पुकारा था। उसे हम सजाने में लगे तथा विश्व रक्षक की रक्षार्थ पुजारी नियुक्त किये। पुजारी सोचने लगा कि दिन को तो मैं इसकी रक्षा करूंगा परन्तु यदि रात्रि में कोई चोर उतार कर सब कुछ ले जाये तो क्या हो? वैसे समझते सब थे कि है यह पाषाण ही सर्वथा अकिन्चत्कर। उसका एक ही उपाय था, मन्दिर को ताला लगाना। वही किया गया। देशकाल आदि की परिधि से बाहर रहने वाले को हमने ताले में बन्द कर दिया।

अज्ञानियों के भगवान् की यही दुर्दशा होनी थी। भगवान् भूखे भी तो होंगे। चिन्ता और बढ़ी। न स्नान की ही व्यवस्था कोई कर पाये, मन ही मन भक्त-जन बड़-बड़ाये।

विश्व के धारक को स्नान तथा विश्व के अन्नदाता को भोजन कराना—ये काम हम न करते तो कौन करता। सारे विश्व के रक्षक भगवान् एकाकी रहे। हमारे घरों में गृहणियां और भगवान् रहे बिना नारी के. नारी के बिना भी भला जीवन का आनन्द है। बस, फिर क्या था। सब के साथ नारी खड़ी कर दो। विष्णु के साथ लक्ष्मी, राम के साथ सीता, कृष्ण के साथ राधा, व रुकममणी। भगवान् जी के धाम का सारा समान हो गया। कहां तक लिखें।

हम पहले चिन्तन कर चुके हैं कि श्रुति बार-बार पुकार रही है कि वह शरीर धारण नहीं करते। परन्तु इस बात पर सब लोग एक मत नहीं होते। कुछ नास्तिक कहते हैं कि वह शरीर अवश्य धारण करते हैं। उनकी यह धारणा है कि जब देश में समस्या आ जाती है तो वह शरीर धारण करता है। समस्या के समाधान के लिये वह अवतार लेते हैं। राम न आते तो रावण कैसे मरते। कृष्ण न आते तो कंस नहीं मर सकता था।

हम इन लोगों को यह समझाते हैं कि जब संसार में लाखों करोड़ों मनुष्य मरते हैं, तब क्या मारने के लिए कोई आता है। तो क्या केवल राम और श्री कृष्ण जी के लिए ही आना था उन्हें! परन्तु वे अपनी रट लगाये जा रहे हैं और झूठी दलीलें देकर असत्य को सत्य बता रहे।

उसमें ये लोग भगवती श्रुति का प्रमाण देते हैं कि देखो वेद स्वयं कह रहा है—

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधाऽविजायते ।
॥ यजु. ३१ अ.,म. १६ ॥

प्रजापति गर्भ में आता है । विद्वान् कहते हैं–ठूठ न बनो आप तो वेद की बात कह रहे हैं । हमारा तो तुलसी ही मना कर रहा है—"जा दिन ते हरि गर्भ में आये ।"

इसका साक्षात् प्रमाण है, हरि शब्द परमात्मा का है ही नही, और परमात्मा गर्भ में आता ही नहीं । वेद मन्त्रों के अर्थों को ये लोग समझते नहीं । बिना समझे अर्थ कर रहे हैं । इनकी तो वही बात है—एक लड़का ऊर्दू का कायदा पढ़ रहा था । वह मौलवी के पास गया । उसमें लिखा था, बिना हाथ-मुंह धोये नमाज नही पढ़नी चाहिए । उसने पहला वाक्य पढ़ा ही नहीं, तो मुल्ला ने कहा—अकलमन्द यह पढ़, बिना हाथ-मुंह धोये लिखा है । ठीक यही बात, इन पर लागू होती है । वेद क्या कह रहा है— 'प्रजापति' का अर्थ है गर्भ में रचना कर रहा है बच्चे को । वही परम-पिता परमात्मा 'प्रजापति' नाम से गर्भ रचना करता है । 'अजायमानः' को ये लोग पढ़ते ही नहीं । इसका अर्थ है, वह कभी पैदा नही होगा । वह संसार के लोगों का नन्हा शिशु देकर कह रहा है- यह मेरी रचना है । क्या ही कमाल की बात है दुनियां के लोगों को नन्हें-नन्हे शिशु, भांति-भांति के खिलौनो की तरह बनाता है । ऐसे प्रभु के लिए घटिया-घटिया बातें करना ठीक नहीं है ।

काम

पाठकगण ! आगे उसके काम के विषय में लिख रही हूँ। जिससे आप लोगों की और भी दृढ़-धारणा बन जाये कि प्रभु कितने शक्तिशाली हैं और वह क्या-२ काम करते हैं क्योंकि इसके लिए भी पौराणिकों को बहुत गलत धारणा बनी हुई है। ये लोग स्थान-२ पर ऐसा सिद्ध करते हैं कि जब ही उनके भक्तों का कोई काम रुका हुआ हो और वह उन्हें बुलाते हैं तो भगवान् तुरन्त आकर उनका काम कर देते हैं।

भक्तमाल के अन्दर कथा लिखो हुई है—एक सैन नाई था वह उसी देश के राजा के यहां पर प्रतिदिन हजामत बनाने जाया करता था। एक दिन वह जाना भूल गया। जब सायं काल का समय हुआ तो उसे याद आया। वह उसी समय राजा के यहां चला गया और जाकर क्षमा-याचना की--महाराज मेरे से भूल हो गई। इसलिए अब हजामत बना देता हूं। राजा ने कहा—नहीं, आप प्रातःकाल आये थे। सैन नाई बड़ा प्रसन्न होकर घर लौट आया और आकर सब लोगों को बताने लगा। देखा लोगो ! आज मैं राजा के यहां जाना भूल गया था। भगवान् ने मेरा रूप बनाकर राजा को हजामत बना दी।

बड़ी मूर्खता है। सर्व सृष्टि के मालिक और पालक को नाई बना देना कहां की अकलमन्दी है। इनके ग्रन्थों में जो कि अनपढ़ लोगों के लिखे हुए हैं, कवितावली भी बना २ कर झूठ को सत्य दिखाने का प्रयास किया गया है। आप लोगों की जानकारी के लिए कविता लिख रही हूं—

रंका तारे वांका तारे, तारे सदन कसाई।
सुवा पढ़ावत गनका तारो, तारी मीरांबाई॥
धन्ना-भक्त को खेत जमायो, नामें छान छवाई।
सैन भक्त को संसा मेटयो, आपबने हरिनाई॥
ध्रुव-तारे प्रह्लाद उभारे और गजराज उधारे।
नरसी जी के भात-भरन को रूप सांवरो धारे॥
जब लग गज बल आपनी वरतयो नीक सरयो नहीं काम।
निर्बल होके प्रभु पुकारा, आये मिले भगवान्॥

इस कविता को पढ़ने से यही ज्ञात होता है कि ईश्वर को न्यायकारी नहीं कहना चाहिए, क्योंकि उन्होंने अपने न्याय को तो एक ताक में रख दिया और इन भक्तों के कहने पर इनका जो-जो काम था, कर दिया। ऐसा लगता है कि ये भगवान् को अपना मालिक न समझकर नौकर समझते हैं, क्योंकि धन्ना जाट के तो खेतों को पानी दिया और नामे-भक्त का झोपड़ी की छत टूटने पर ऊपर छप्पर डाला।

मुझे तो इन बुद्धिहीनों की बातों पर हंसी आ रही है इसीलिए मैं चाहती हूं कि इन लोगों को यह जानकारी होनी चाहिए की प्रभु क्या काम करते हैं।

परम-पिता परमात्मा के काम के विषय में असल बात यह है कि वह सृष्टि का उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करते हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक व्यक्ति के शुभ तथा अशुभ कर्मों का भी यथा योग्य फल देते हैं। ये सारे काम उसी जगत् नियन्ता के हाथ में है और किसी के वश में नहीं है। यदि वे प्रभु इस काम को छोड़कर हम मनुष्यों के हाथ में दे देवें तो संसार का सारा काम अस्त-व्यस्त हो जाये, क्योंकि इतने बड़े ब्रह्माण्ड का संचालन करना कोई आसान काम नहीं है। कवि सत्य ही लिख रहा है—

सृष्टि बनाके पालना दाता है तेरे हाथ में।
करना प्रलय भी अन्त में नाथ तेरा ही काम है ॥

अर्थात् किसी और की शक्ति नहीं है। केवल आप ही हो, जो इस उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय इत्यादि काम को कर रहे हैं। इसीलिए तो आपका नाम सर्वशक्तिमान् है। जिस यजुर्वेद के मन्त्र के ऊपर हम पहले विचार कर आये हैं कि वे प्रभु 'स परिअगात्' है तो आगे उसका विशेषण 'शुक्र' आया है। वेदमाता कहती है वह बहुत शक्तिशाली है। जब मनुष्य यह जान लेगा कि उसको शक्तिमान् कहते हैं तो फिर उसका 'अहं' कहाँ रह सकता है। वरन् छोटे से छोटा मनुष्य भी अपने को खान साहब समझता है। ग्राम का पटवारी कहे मैं सबसे बड़ा हूं। यदि प्यास भी लगे तो उठकर सुराई से पानी भी स्वयं न लेकर पीये। नौकरों को आवाज लगाये, पानी का गिलास दो। एक दिन कानूनगो आ गया। वह दब गया। उसको पानी पिलाये। एक दिन तहसीलदार आ गया

तो डर गया। यह तो साधारण मनुष्य की बात है जो तह-सीलदार से डरता है।

परन्तु वेदमाता कहती है—वह 'शुक्र' है अर्थात् शक्तिशाली है। उससे डर और पाप न कर। जब हर समय तू उसके डंडे से डरेगा तो देखना, कुकर्म से बच जाएगा। परन्तु तू इस बात की ओर ध्यान नहीं दे रहा। वह बड़ा बलवान् है ध्यान रख और डर। वह अवश्य दण्ड देगा। अरे नादान प्राणी, तेरे पास जरा भी बल आया या पद मिला और तू लगा अत्याचार करने। लेकिन सोच-२। उसका काम है दुष्टों को दण्ड देना। वह ऊंच को नीच बना देता है। कैसे करता है इस बात स्पष्ट करने के लिए आप इस कहानी को पढ़िये—

बरसों पहले लखनऊ और कानपुर के बीच एक छोटी-सी तहसील थी। वहां का तहसीलदार था महबूबअली खान। मोटर गाड़ियां उन दिनों थी नहीं। सभी बड़े लोग घोड़ा गाड़ियां इस्तेमाल करते थे, जिन्हें फिटिन कहा जाता था। महबूबअली खान के पास भी एक बढ़िया फिटिन थी। रामदीन उसका साईस था।

महबूब अली खान यूँ तो बड़े दबदबे वाला अफसर था किन्तु एक कमजोरी थी उसमें। वह रिश्वतखोर था। पैसे के बल पर उससे कुछ भी कराया जा सकता था। साईस रामदीन को अपने मालिक की यह आदत ठीक नहीं लगती थी। वह अक्सर कहा करता—"मालिक, भगवान का दिया सभी कुछ तो है। आपके पास। फिर भी आप पैसे के मोह में सच को झूठ क्यों बना देते हैं। ऐसा क्यों करते हैं ?" जब

भी ऐसा अवसर आता, महबूब अली खान रामदीन को झिड़क दिया करता था।

एक बार क्या हुआ। रामदीन घोड़ों के लिए घास छीलने गया। गर्मियों के दिन थे। नगर के आस-पास कहीं हरी घास न थी। देखता-तलाशता वह दूर निकल गया। काफी दूर पुरानी पोखरी के पास उसे हरी घास दिखाई दी। रामदीन ने ढेंट में फसी खुरपी निकाली और घास छीलने लगा। सहसा उसकी खुरपी किसी कड़ी वस्तु से टकराई। टन की आवाज हुई, तो रामदीन के कान खड़े हो गये। उसने घास हटाकर देखा, तो जमीन में दबे पीतल के कलश का ऊपरी हिस्सा उसे दिखाई दिया। उसने सावधानी से मिट्टी हटाकर कलश बाहर निकाल लिया। ढ़कना खोलकर देखा, तो, चकित रह गया। कलश ऊपर तक अशर्फियों से भरा था। उसका सिर घूम गया। काफी देर तक वहीं बैठा सोचता-विचारता रहा, फिर कलश को चादर में लपेट कर घर ले आया दरवाजा बन्द करके अशर्फियां गिनीं। पूरी तीन हजार थीं। उन दिनों सोने का भाव तीस रुपये तोला था, अशर्फियों की कीमत अस्सी नब्बे हजार रुपये बैठती थी।

उस दिन वह काफी देर से काम पर पहुंचा। तहसीलदार ने कारण पूछा, तो बोला—

"हूजूर, घर से खत आया है। पिताजी सख्त बीमार हैं। मुंह देखने को बुलाया है। आप कहें तो कुछ दिन के लिए गाँव हो आंऊं।" रामदीन ने कारण ही ऐसा बताया था कि महबूबअली मना न कर सका रामदीन उसी दिन सारी अशर्फियां लेकर अपने गांव रवाना हो गया।

पिता की बीमारी तो महज एक बहाना थी। उसने गांव आकर धीरे-धीरे अशर्फियां बेच डालीं। मकान की मरम्मत कराई। दो जोड़ी नए बैल खरीदे। भैंस खरीदी। फिर और भी सामान खरीदने लगा।

महबूबअली खान के पत्र आते, तो वह हर बार कोई न कोई बहाना बना देता। धीरे-धीरे रामदीन गांव के सम्पन्न किसानों में गिना जाने लगा। उसके खेत बड़े होते गए। मकान ऊंचा होता गया। और एक दिन ऐसा भी आया कि वह गांव का नम्बरदार बन गया।

अब रामदीन को अपने पुराने मालिक की याद आई। बहुत दिन से महबूबअली खान का कोई खत भी नहीं आया था। एक दिन रामदीन उससे मिलने तहसील जा पहुंचा।

वहां उसे एक नई बात सुनने को मिली। कुछ दिन पहले रिश्वत लेने के अपराध में महबूब अलीखान को पांच वर्ष की सजा हो गई थी। अंग्रेज सरकार ने उसकी सारी सम्पत्ति कुर्क कर ली। उसकी पत्नी इस दु:ख से मर गई थी। बेटे न जाने कहां चले गए थे। रामदीन ने सुना तो सन्न रह गया। एक बार उसके मन में आया कि जेल जाकर वह पुराने मालिक से मिल आए। फिर न जाने क्या सोचकर वह चुपचाप गांव लौट गया। इस बात को भी कई वर्ष बीत गए। एक दिन रामदीन अपने खेतों की ओर जा रहा था। रास्ते में गांव का पनघट पड़ता था। वहां उसने एक भिखारी को बैठा देखा। अस्त-व्यस्त बाल, उलझी हुई दाढ़ी-मूंछें जर्जर शरीर और मैले-फटे कपड़े। उसकी सूरत जानी पहचानी सी लगी रामदीन को।

उसने थोड़ा पास आ, गौर से देखा तो पहचान गया। वह भिखारी और कोई नहीं, पुराना मालिक महबूबअली खान था। खेतों की ओर न जाकर रामदीन तुरन्त अपने घर लौट आया। बेटों को बुलाया। कहा—"तुरन्त पनघट पर जाओ। वहां एक बूढ़ा भिखारी बैठा है। उसे आदर पूर्वक ले आओ। हजामत बनवाओ, नहलाओ- धुलाओ, साफ कपड़े पहनाओ। खाना खिलवाओ और मेहमानखाने में उसका बिस्तर लगवा दो।" फिर उसने फुसफुसाकर बेटों के कान में कुछ कहा।

रामदीन के दोनों बेटे तुरंत पनघट पर गए। भिखारी से बोले—"बाबा, आप हमारे साथ चलें। घर पर आराम से रहें।" भिखारी चुपचाप उठकर उनके साथ चल दिया।

रामदीन के बेटों ने महबूब अली खान का खूब स्वागत-सत्कार किया। भोजन में रामदीन ने वही चीजें रखवाई जो महबूब अपने अच्छे दिनों में खाया करता था। खाते चबाते उसकी आंखों से आंसू टपकने लगे। पुराने दिनों की याद ने बैचेन कर दिया उसे। रामदीन के बेटों ने पूछा—"बाबा, आप रोते क्यों हैं ?"

महबूब अली ने कांपती आवाज में कहा "जिसने मुझे इतनी इज्जत बख्शी है, मैं उससे मिलना चाहता हूं।"

"अभी नहीं!"—रामदीन के एक बेटे ने नम्रता से कहा—"वह इस गांव के नम्बरदार हैं। जरुरी काम से बाहर

बाहर गये हैं। आप इत्मीनान से रहें। वह आएंगे, तो आपसे जरूर मिलेंगे।" इशी तरह कई दिन बीत गए। महबूब अली खान दिन में कई-कई बार नम्बरदार से मिलने की इच्छा जाहिर करता, किन्तु वही उत्तर मिलता—"अभी वह आए नहीं हैं।" और एक दिन महबूब अली के सब्र का बांध टूट गया। शाम का समय था। रामदीन के दोनों बेटे किसी कारणवश मौजूद न थे। मौका पाकर वह उठा। जैसे ही मेहमानखाने से बाहर आया कि उसे रामदीन दिखाई दे गया रामदीन उसी पुराने लिवास में था। शायद मेहमानखाने की ओर ही आ रहा था।

महबूब अली खान को दरवाजे से बाहर आते देख, उसने झुककर सलाम किया, जैसा कि वह पुरानी नौकरी में था। पूछा—"मालिक, आप कैसे हैं? कहां जा रहे हैं?"

महबूब अली खान ने उसे सारी बात बताकर कहा—मेरे दिल में उस इन्सानी फरिश्ते से मिलने की बड़ी ख्वाहिश है। मैं उसके पैर धोकर पीना चाहता हूं। रामदीन, क्या तुम मुझे उसके पास ले चलोगे?"

रामदीन कुछ कहता, इससे पहले ही गांव के दो-तीन बुजुर्ग वहां आ गए। उन्होंने रामदीन को उस अजीब पोशाक में देखा तो चकित रह गए। इससे पहले कि रामदीन उन्हें कुछ इशारा करता, वे बोले—"नम्बरदार जी! आज क्या शौक रचाया, जो ऐसे कपड़े पहन रखे हैं।"

उनके यह शब्द महबूब अली खान के कान में पड़े। पल भर को उसने रामदीन की ओर देखा। फिर उसके पैरों पर गिर पड़ा। बोला—"ओह रामदीन ! तुमने कितनी बार मुझे गुनाह करने से रोका, मगर मैं न माना। अल्लाह ने उसकी मुझे इतनी बड़ी सजा दी कि मैं इस दुनियां में बिलकुल अकेला रह गया।"

रामदीन ने महबूब अली को उठाकर गले से लगा लिया।

इस (दृष्टान्त) कहानी के लिखने का मेरा तात्पर्य यह है कि जो लोग निडर हैं, इस बात से नहीं डरते कि ईश्वर हमें देख रहा है, उन्हें इस से कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

उस परमात्मा का जहां आप दयालु स्वरूप देखते हैं, वहां पर उसका न्यायकारी और रूद्र रूप का भी ध्यान रखिये। ऐसा मत कीजिये—

जय जगदीश भी करते हैं, चार सौ बीसी भी करते हैं। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कभी भूलकर भी गरीब की आह न ले आह लग गई तो भस्म कर देगी। प्रभु ने भूख, नींद, आशीर्वाद ये तीनों गरीब को दिये हैं। वेद कहता है कि हर समय डर कर रहे। न जाने पल में क्या कर दे। प्रभु से मनुष्य प्रार्थना करे, चाहे सारी दुनियां की दौलत भी मुझे मिल जाये, परन्तु अभिमान न आये।

पंजाब में एक बहुत बड़ा नामी वकील जो सच को झूठ और झूठको सत्य बनाकर रिश्वत ले लेकर बहुत धनी बन गया

था। ऐसी बुद्धि ने चक्कर खाया पागल हो गया। जगह-जगह ढेले खाता फिरे। इस लिए तो वेद माता ने कहा—वह शुक्र'' है। बड़ा बलवान है! तुझे दीखता नहीं। यह भावना मन में जगा और डट कर कह दे—प्रभु तू ही सब कुछ है।

देख पृथिवी चल रही है। सूर्य, चन्द्रमा, सितारे चल रहे हैं। कभी टक्कर नहीं खाते। 'शुक्र' चला रहा है। यहां लोक में देख, चलती ट्रेन को अगर ड्राईवर छोड़ दे तो उसी समय एँक्सीडेंन्ट हो जाये टक्कर खा कर गाड़ी चकनाचूर हो जाये। परन्तु वह इतने बड़े विस्तृत लोक कोकान्तरों को चला रहा है। अन्तरिक्ष सारा खाली है, यह उसका काम है। इस सारे विश्व को कठपुतली की तरह चला रहा है। पवन उसके आदेश से चल रही है। सूर्य उसके चलाने से चले पृथ्वी को घुमाये तो वह ही और कई दफा ऐसा घुमाता है कि भूचाल आकर सब तहस-नहस हो जाता है। उस समय सभी लोग यही पुकारते हैं, प्रभु की इच्छा है, जैसा चाहे करता है। मैंने पूर्व ही लिखा था कि वह 'शुक्रं' है। जहां वे सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करते हैं, वहां पर सब प्राणियों के कर्मों का यथायोग्य फल भी देते हैं।

'शुक्रं' का दूसरा अर्थ है, उसको करते देर नहीं लगती। 'शु' का अर्थ शीघ्र 'क्र' का अर्थ कर देने वाला, जैसे वर्षा नहीं हो रही, ऊपर देखा, आकाश में थोड़ी सी बदली आयी

हो गई वर्षा। चारों ओर जल थल हो गया। मनुष्य कहता है—मैं यह करता हूं, वह कर सकता हूं। परन्तु यह नहीं समझता कि मेरे वश में तो कुछ भी नहीं ?

एक विद्वान् आया आर्यसमाज में। कहता—कल मेरा व्याख्यान होगा— 'मृत्यु पर कैसे विजय प्राप्त की जा सकती है।" हजारों लोग एकत्रित हो गये, विद्वान् नहीं आया। शोर मच गया। मन्त्री जी लेने गये। देखा तो डॉक्टर बैठे और मृतक घोषित कर दिया।

उस 'शुक्र" अर्थात् शक्तिमान् को जरा देर नहीं लगती करते। वह पल में ऊंचे को नीचे और नीचे वाले को ऊंचे झूले की तरह कर देते हैं। कवि ने लिखा है—

जगत् हिंडोल बनाया प्रभु ने अपनी परमदया से।
नीचे वाला ऊपर जावे—ऊपर वाला नीचे आवे॥
(झूले वाले प्रभु बतलाया)

मैं समझती हूं कि परमात्मा के काम के विषय में इतना वर्णन करना बहुत है। प्रबुद्ध पाठकवृन्द, मेरी विचारधारा से सहमत होंगे। मैंने ईश्वर के विषय में आजकल जो भ्रान्तियां हैं, उनका सरल तथा स्पष्ट वर्णन किया है ताकि लोग अपनी अविद्या जनित धारणाओं को छोड़ दें। जो लोग ईश्वर के सत्य स्वरूप को छोड़कर पाषाण इत्यादि की बनाई हुई

प्रतिमा की पूजा करना ही ईश्वर भक्ति मानते हैं और सच्चे प्रभु को जानते ही नहीं, उनकी दृष्टि में सर्व रक्षक सर्व-पालक प्रभु की कोई सत्ता नहीं है। अगर कोई भगवान् है तो वह है हमारी तरह शरीरधारी है। क्योंकि बिना शरीर के भगवान् जी कुछ नहीं कर सकते। इसीलिए इन लोगों ने उनको अलग-अलग नाम, धाम और काम की कल्पना की हुई है जो कि सर्वथा वेद और शास्त्रों के विरुद्ध है। इसके साथ-साथ ही मैं यह स्पष्ट कर देना उचित समझती हूं कि उनको ऐसा करने से या मानने से कुछ लाभ भी तो नहीं, केवल समय नष्ट करते हैं।

मेरी इन भक्तों से यह प्रार्थना है कि वे सच्चे प्रभु को जानने का प्रयास करें और उसके असली स्वरूप को समझ-कर हृदयरूपी मन्दिर में ही उसका ध्यान करें। यहीं पर उन को सर्वेश्वर ब्रह्म के दर्शन होंगे। निश्चय से ही उनकी की हुई आराधना सफल होगी।

[इतिशम्]

लेखिका की अब तक प्रकाशित पुस्तकों की सूची निम्नलिखित है—

★ उपदेश कथा मंजरी

★ वैदिक पञ्चामृत

★ देव दयानन्द

★ यज्ञ महिमा

★ याज्ञिक जीवन

★ मधुर गीत

★ संगीत सुधा

★ भजन माला

★ रत्न माला

★ मणि माला

★ दीप माला

★ नकली भगवान

★ नकली और असली मातारानी

निवेदन :—

मीरां साहित्य प्रकाशन में उदारता से दान देकर अधिक साहित्य प्रकाशित कराकर पुण्य और यश के भागी बनें।

—मीरां यति